सहृदय

(साहित्य, संस्कृति, संवेदना और सोच का त्रैमासिक)

ISSN : 2230-8997
वर्ष : 8, अंक 27
जनवरी-मार्च 2016

सहृदय

'नव उन्नयन'

अनुक्रम

संपादकीय का होना, न होना! / **संपादकीय** – (v)

आलेख

इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में सामाजिक चेतना / **प्रो. शंकर बुंदेले** – 1

कविता का भविष्य बनाम भविष्य की कविता / **प्रो. सत्यदेव मिश्र** – 9

नाटक : दृश्यं श्रव्यं व यद्भवेत / **डॉ. अनुशब्द** – 15

रघुवीर सहाय के गद्य साहित्य में भाषा चेतना / **डॉ. आरती गोयल** – 19

रघुवीर सहाय की रचना में मुक्ति की परिकल्पना / **डॉ. स्वाति कुमारी** – 28

भूमंडलीकरण और उसकी संस्कृति का प्रभाव / **डॉ. प्रदीप कुमार** – 33

बालमन का सच और कमलेश्वर की कहानियाँ / **डॉ. आलोक रंजन पांडेय** – 41

गुरु तेग बहादुर की वाणी में पौराणिक संदर्भ / **डॉ. देवेंद्र कुमार** – 46

भाषा-विमर्श

बल्गारियन भाषा का वैश्विक स्वरूप / **वनिका** – 55

हिंदी के आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण में अनुवाद की भूमिका / **डॉ. हरदीप कौर** – 63

तकनीकी विकास और भाषाई एकता : प्रगति के सोपान / **प्रदीप कुमार अग्रवाल** – 67

विमर्श

'रामचरितमानस' का विमर्शगत अध्ययन / **शिवांग कुमार भावसार** – 74

संस्मरण

अरे! / **डॉ. बी.एस. त्यागी** – 78

सहृदय : जनवरी-मार्च 16; अंक--27 : (iii)

अनुक्रम

डॉ. अनुशब्द

नाटक : दृश्यं श्रव्यं व यद्भवेत

ऐंद्रिक संपर्क के आधार पर भारतीय मनीषा ने काव्य को दो भागों में विभक्त किया है -- दृश्य एवं श्रव्य। नाटक दृश्य काव्य है। दृश्यत्व इसकी पहचान है। यही तत्त्व नाटक को कलात्मक अभिव्यक्ति की अन्य विधाओं से अलग व्यक्तित्व देता है, पृथक परिभाषा देता है। यही वजह है कि नाटककार कालिदास ने नाटक को 'चाक्षुष यज्ञ' या 'नयनोत्सव' का विशेष्य माना है। पाश्चात्य नाट्य समीक्षक बेकरमैन कहते हैं--''नाटक का आलेख कंकाल मात्र होता है, प्रदर्शन ही उसे मांस-मज्जा से भरता है।''[1] निस्संदेह दृश्यत्व नाटक का एक महत्वपूर्ण अवयव है और उसकी जैविकी में इसकी महत्वपूर्ण और अनुपेक्षणीय भूमिका है, मगर दृश्यत्व ही नाटक का सर्वात्मभाव नहीं होता, श्रव्यत्व भी उसका अपरिहार्य अंग होता है। कारण कि नाटक सिर्फ क्रीडनीयक ही नहीं, काव्य भी होता है। डॉ. धर्मवीर भारती ने लिखा है कि, ''लगता है पृथ्वी थियेटर्स में सब कुछ था, सिर्फ एक चीज नहीं थी यानी नाटक।''[2] जाहिर है, नाटक मात्र प्रदर्शन नहीं है। डॉ. दशरथ ओझा भी लिखते हैं कि, ''वह केवल खेल तमाशा नहीं है, उसका परीक्षण उसमें निहित सांस्कृतिक तत्त्वों और जीवन की शाश्वत समस्याओं के उद्घाटन के आधार पर करना चाहिए।''[3] गरज कि नाटक शिल्प भी है, कला भी है और कला होने के कारण इसमें उस 'कुछ' की अपेक्षा हमेशा रहती है, जो किसी कृति को साहित्य बनाता है।[4]

बहरहाल, नाटक में अभिव्यक्ति और संप्रेषण के दो आयाम हैं--दृश्य और श्रव्य।[5] पश्चिम में इन दोनों आयामों की प्राथमिकता विवादास्पद रही है। दोनों पक्षों के समर्थकों ने अपनी-अपनी महत्ता और अर्थवत्ता सिद्ध करने की कोशिश की है। एक पक्ष का तर्क है कि नाटक पर केवल रंगमंच का ही अधिकार नहीं है। ''वह केवल रंगमंच के लिए नहीं, वरन साहित्यिक अभिव्यक्ति के लिए भी लिखा जाता है।''[6] दूसरे पक्ष का प्रतितर्क

अनुशब्द